आखर हिंदी पत्रिका ; e-ISSN-2583-0597 खंड 5/अंक 2/जून 2025
Received: 20/05/2025; Accepted: 19/06/2025; Published: 28/06/2025

हिन्दी कथा साहित्य में यथार्थ की परंपरा

- रंजना गुप्ता,
शोधार्थी,
जैन यूनिवर्सिटी, बेंगलुरु
Email: guptaranjana489@gmail.com
Mobile: 98458 91758

रंजना गुप्ता, हिन्दी कथा साहित्य में यथार्थ की परंपरा, आखर हिंदी पत्रिका, **खंड 5/अंक 2/जून 2025**,(60-65) https://doi.org/10.5281/zenodo.15767584

This work is licensed under CC BY-NC 4.0

हिन्दी कथा साहित्य में यथार्थवाद का आरम्भ भारतेंदु से मान सकते हैं। यथार्थ भारतेंदु के नाटकों में देख सकते हैं। यथार्थ की उत्कृष्ट अभिव्यक्ति प्रेमचंद की कथा साहित्य में मिलती है। यथार्थ का तात्पर्य है यथा + अर्थ - दो शब्दों से मिलकर बना है, अर्थात जैसा है वैसा ही चित्रण होना या प्रस्तुत करना। यथार्थ की परंपरा को हिन्दी साहित्य में लेखकों ने भारत की धरती, समाज और देश में जो देखा, जो अनुभव किया, सच्चाई को पाठक वर्ग के समक्ष प्रस्तुत किया। उन्हें जीवन और जगत के अनुभव से परिचित कराया। यह एक विरासत बनाकर भविष्य के लेखकों के लिए प्रेरणा स्रोत बनी। यथार्थवाद की उत्पत्ति पश्चिमी देशों में हुई। हिन्दी साहित्य में यह एक विचारधारा के रूप में आई। अनेक ऐसे कारण होते हैं जो लेखक के मन मस्तिष्क को प्रभावित करते हैं और साहित्य की विधाओं में अवतरित होकर पाठक तक पहुँचते हैं। 'देवरानी-जेठानी' की कहानी की रचना उपन्यास के रूप में नहीं बल्कि बालिकाओं के लिए उपयोगी पाठ्य पुस्तक के रूप में हुई थी। सरकारी सहायता से देवरानी जेठानी की कहानी का लेखन और मुद्रण हुआ। बाद में इसी तरह की दो पुस्तकें वामा शिक्षक(1872) और भाग्यवती(1877) मे लिखी गई। इनका मकसद था स्त्री शिक्षा का विकास और आदर्श स्त्री चरित्र की प्रस्तुति। संयोगवश यही इनकी उपन्यास होने की पहचान बन गई। 'वामा

शिक्षक'(1872), 'भग्यवती'(1877) 'निस्सहाय हिन्दू'(1881), 'परीक्षा गुरु'(1882) आदि कुछ उल्लेखनीय गद्य साहित्य हैं। 'वामा शिक्षक' ईश्वरी प्रसाद और 'भाग्यवती' श्रद्धा राम फुलौरी, 'निस्सहाय हिन्दू' राधा कृष्ण दास, 'परीक्षा गुरु' श्रीनिवास दास द्वारा लिखी गई। 1926 ईस्वी में शिवपूजन सहाय ने 'देहाती दुनिया' उपन्यास लिखा> 'देहाती दुनिया' भोजपुरी अंचल को वहाँ के तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था, लोकजीवन की बोली, भाषा, रहन-सहन को पूरी यथार्थता के साथ प्रस्तुत किया गया है। यथार्थ, वह भी भोगा हुआ और अनुभव किया हुआ यथार्थ प्रस्तुत हुआ है। जब हम स्वयं अनुभव करते हैं, लिखते हैं वह ज्यादा यथार्थ होता है, सजीव होता है। 'देहाती दुनिया' पुस्तक की भूमिका में लेखन लिखते हैं "मैं ऐसी ठेठ देहात का रहने वाला हूं जहाँ इस युग की नई सभ्यता का बहुत ही धुंधला प्रकाश पहुंचा है। वहाँ केवल दो ही चीज प्रत्यक्ष देखने में आती हैं अज्ञानता का घोर अंधकार और दरिद्रता का तांडव नृत्य। वहीं पर मैंने स्वयं जो कुछ देखा - सुना है, उसे यथाशक्ति ज्यों का त्यों इसमें अंकित कर दिया है। इसका एक शब्द भी मेरे दिमाग की खास उपज या मेरी मौलिक कल्पना नहीं है"।

वीरेंद्र यादव 'उपन्यास और देस' में लिखते हैं "'देहाती दुनिया' को आधुनिक हिन्दी उपन्यास की नींव निर्माण करने वाली कृति के रूप में दर्ज कर उसके महत्व को पहचाने जाने की जरूरत आज भी दरपेश है"। प्रेमचंद से पूर्व हिन्दी उपन्यासों का विषय था हम परतंत्र क्यों हुए? जासूसी उपन्यास लिखे गए लेकिन जैसा कि 'साहित्य का उद्देश्य'(1936) में प्रगतिशील लेखक संघ के प्रथम अधिवेशन में अध्यक्ष पद से दिए गए भाषण में स्पष्ट कर दिया "साहित्यकार का लक्ष्य केवल महफ़िल सजाना और मनोरंजन का सामान जुटाना नहीं है। उसका दरजा इतना न गिराइए"। यथार्थ की अभिव्यक्ति हम प्रेमचंद से मान सकते हैं क्योंकि 'देहाती दुनिया' के बाद प्रेमचंद ने 1936 में 'गोदान' लिखा। 'गोदान' में ग्रामीण जीवन, ग्रामीण संस्कृति, यथार्थ की भूमि पर सहज भाषा शैली में लिखी गई वेदना पूर्ण अभिव्यति है। 'गोदान' के शीर्षक से स्पष्ट है गौ-दान । इसके ही इर्द गीर्द पूरा रचना संसार बसा है। ग्रामीण संस्कृति, ग्रामीण जीवन की धुरी किसान की करुण वेदना पूर्ण कथा है। यहीं से यथार्थवादी परंपरा की उत्पत्ति होती है। प्रेमचंद की कहानीयाँ 'सुजान भगत', 'दो बैलों की कथा', 'सवा सेर गेहूँ', 'सदगति', 'कफन, 'बुढी काकी', 'बेटों वाली विधवा' आदि कहानियों के विषय हमारे चारों तरफ की सामाजिक व्यवस्था, परंपरा, रूढ़िवादी सोच से प्रभावित थी। ये कहानीयाँ आदर्शवादी, मनोवैज्ञानिक, सत्य के साथ पाठक वर्ग के समक्ष प्रस्तुत होती हैं। इनमें मानवीय नैतिक मूल्य, सत्य, ईमानदारी, परोपकार, सद्भाव जैसे गुणों की प्रधानता है। उनके आरंभिक दौर की कहानियों में राष्ट्रीय चेतना का स्वर है क्योंकि सन् 1907 से 1920 के समय में लिखी गई कहानियों का परिवेश तत्कालीन सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक स्थिति के अनुरूप था। 1920 से 1936 के समय में लिखी गई कहानीयाँ और उपन्यास सामाजिक और आर्थिक चेतना से

परिपूर्ण थे। प्रारंभिक दौर की कहानियों में राष्ट्रीय सुधार भावनाओं मिलती है। 'घासवाली' कहानी में हृदय परिवर्तन ही अन्त में होता है। 'कफन' कहानी पेट की भूख इतनी स्वार्थी हो जाती है पति-पत्नी का रिश्ता, बाप बेटे का रिश्ता भी पेट के भूख की आग में जल चुका होता है। इसमें किसानी और मजदूरी के प्रति निराशा उत्पन्न हो चुकी है। 'जलूस' जैसी कहानी में भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के समय हिन्दू मुस्लिम एकता बनाए रखने के सन्देश के उद्देश्य को ध्यान में रखा गया है। कहने का तात्पर्य है प्रेमचंद की कहानियों में भारतीय स्वाधीनता संग्राम, स्त्री जीवन की वेदना, उसके प्रति संवेदना, दलित वर्ग की समस्याओं के प्रति गंभीरता से विचार किया और लिखा । भविष्य के बारे में जो बातें लिखीं वे वर्तमान में काफी हद तक सत्य सिद्ध हो रही हैं। प्रेमचंद ने लेखन कार्य सन् 1900 के लगभग आरंभ किया। उनकी मृत्यु 1936 में हुई। इसी परम्परा के अंतर्गत अन्तर्गत फणीश्वरनाथ रेणु का 'मैला आँचल' प्रकाशित होता है तथा इस यथार्थवादी परम्परा में सफलता पू र्वक कड़ी बढ़ती है। उन्होंने परम्परा से चली आ रही नायक प्रधान उपन्यास की संरचना को अलग ही तरह से प्रस्तुत किया। उन्होंने 'मैला आँचल' में पूरे अंचल विशेष को नायक बनाकर प्रस्तुत किया तथा एक नया परिवर्तन देखने को मिला। उन्होंने अंचल विशेष की भाषा, रीति-रिवाज, पर्व-त्यौहार, मानसिकता को प्रामाणिक रूप में प्रस्तुत किया। उन्होंने इस उपन्यास की भूमिका में लिखा "इसमें फूल भी है, शूल भी, धूल भी है, गुलाल भी - मैं किसी से दामन बचाकर निकल नहीं पाया"। यह संदर्भ है जो रेणू के उपन्यास का यथार्थ है। रेणू का उपन्यास आंचलिक है लेकिन यथार्थ परम्परा का संवहन करता है। प्रेमचंद का 'प्रेमआश्रम', 'रंगभूमि' और 'गोदान', शिवपूजन सहाय की 'देहाती दुनिया', भैरव प्रसाद गुप्त का 'सती मैया का चौरा' और नागार्जुन का 'बलचनमा'। इन सब उपन्यासों की पृष्ठभूमि ग्रामीण अंचल ही है। ग्रामीण चेतन तथा वहाँ हो रहे बदलाव को चित्रित किया गया है। 'मैला आँचल' में मेरीगंज गाँव का सजीव व जीवंत चित्र प्रस्तुत हुआ है। वहाँ पर निवास करने वाले व्यक्तियों के मध्य हास - परिहास, वैमनस्य, प्रेम-घृणा, द्वेष, तिरस्कार, जलन, समर्पण, अमानवीय शोषण, मानवीय सम्बन्ध, करुणा आदि मानवीय गुणों एवं अवगुणों को रेणु 'मैला आँचल' में प्रस्तुत करते हैं। इस प्रकार अनेक संगतियों विसंगतियों को रेणु ने 'मैला आँचल' में अभिव्यक्त किया है। इसी प्रकार उनकी कहानी 'पंचलाइट', 'नैना जोगिन', 'तीसरी कसम', 'रस प्रिया', 'लाल पान की बेगम', 'संवादिया', 'जलवा', 'आत्मसाक्षी' 'ठेस' आदि कहानीयाँ जिनमे विभिन्न विषयों को अभिव्यक्ति मिली है।

यथार्थ की परंपरा में आते हैं जगदीश चंद्र। जिनका उपन्यास 'धरती धन न अपना' है। इसमें पंजाब के दोआब क्षेत्र के चमार जाति के उत्पीड़न और शोषण की कथा है। हमारे सामाजिक व्यवस्था ऐसी है कि दलित वर्ग के प्रति अछूत का व्यवहार तथा जीवन के लिए जरूरी मूलभूत जरूरत की पूर्ति में भी अनेकों जटिल समस्याओं का सामना करना पड़ता है। जन्म-कर्म के सिद्धांत अर्थात जन्म के आधार पर अछूत मानना जैसी

समस्याओं को प्रस्तुत कर, आलोचना की गई है। इसमें मानवीय मूल अधिकारों से वंचित कर दलित वर्ग के प्रति पशुवत व्यवहार करना तथा इस प्रकार का जीवन जीने को मजबूर कर देना जहाँ मानवता का पतन हो रहा हो, इस उपन्यास में दर्शाया है, चित्रित किया है। सदियों से चली आ रही व्यवस्था और वंचित समुदाय के प्रति इस प्रकार का व्यवहार उन्हें इसी स्थिति में रहने को मजबूर करती है। 'धरती धन न अपना' में इन्हीं समस्याओं को पूरी संवेदनशीलता के साथ लेखक प्रस्तुत करते हैं।

यहां पर भी 'ज्ञानो' जो स्त्री चरित्र है, सशक्त दिखाया गया है। वह विद्रोह करती है। काली और ज्ञानो के प्रेम को ना स्वीकार करना, ज्ञानो की हत्या होना, हमारे समाज में स्त्री की स्थिति को स्पष्ट करता है। दलित वर्ग को सवर्ण चौधरी शोषक वर्ग का चमार, कुत्ता कहकर संबोधन देना, अपमानित करना, दलित स्त्रियों का यौन शोषण करना, सवर्ण चौधरी के सामन्ती भावना या प्रवृत्ति का द्योतक है। इसमें हिन्दू समाज की दमन की प्रवृत्ति को प्रस्तुत किया है। इसमें पंजाब प्रदेश के भौगोलिक सुन्दरता, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक स्वरूप को यथार्थ रूप में अभिव्यक्ति हुई है। जो प्रेमचंद की यथार्थवादी परंपरा की पुष्टि करती है। जगदीश चन्द्र के अन्य उपन्यास हैं 'आधा पुल'(1973), 'कभी न छोड़े खेत'(1976), 'मुट्ठी भर काँकर'(1976), 'टूँडा लाट'(1978), 'घास गोदाम'(1985) और 'नरक कुण्ड में वास'(1994), 'लाट की वापसी'(2000) आदि हैं।

इसी परंपरा की एक और कड़ी है शिवमूर्ति। वे भी अपने कथा साहित्य मे पूर्व भोगे हुए यथार्थ को अभिव्यक्त करते हैं। शिवमूर्ति ने 1968 से लिखना शुरू किया। बीकानेर से वातायन पत्रिका में शिवमूर्ति की कहानी 'पानफुली' छपी तथा आगरा से प्रकाशित पत्रिका 'युवक' में उनकी कहानी 'मुझे जीना है' छपी। शिवमूर्ति की कहानीयों में ग्रामीण जीवन की विडंबना, गहरी पीड़ा 'केसर-कस्तूरी', 'कसाई-बाड़ा', 'तिरिया चरित्तर' जैसी कहानियों में देखने को मिलती है। गाँव में अंबेडकरवादी विचारधारा तथा जाति व्यवस्था को देखने का नया नजरिया प्रस्तुत होता है। उनके उपन्यास 'त्रिशूल', 'तर्पण' और 'आखिरी छलांग' है। शिवमूर्ति के पास अपने अनुभव हैं इसलिए यथार्थ के प्रति उनकी पकड़ मजबूत है। उनकी कहानी तिरिया चरित्तर, कसाई-बाड़ा, अकालदंड, भरतनाट्यम, केसर कस्तूरी है। शिवमूर्ति ग्रामीण जीवन, वह भी किसान जीवन, संस्कृति समाज को अच्छी तरह समझते हैं, उसमें रचे बसे हैं, इसलिए उनके अनुभव यथार्थपूर्ण हैं। उनकी रचनाओं में आजाद भारत की वह तस्वीर है जिसमें अनेक तरह की विद्रूपतायें हैं, जटिलतायें हैं, उनकी अभिव्यक्ति पूरी संजीदगी की के साथ हुयी है। उनकी कहानियों में स्त्रियों का संघर्ष है। ऐसी स्त्रियों की कहानी कहते हैं जो अनपढ़, श्रमिक उपेक्षित, रूप प्रस्तुत करते हैं। उनके कहानियों में समकालीन आज का यथार्थ है जिसमें आज का समाज, राजनीति, गरीबी और अन्य समस्यायें चित्रत हुई हैं। किसानों की आत्महत्या एक ज्वलंत समस्या है।

इसी को आधार कर उन्होंने 'आखिरी छलांग' लिखा है। 90 के दशक के गाँव का चित्रण उनकी कहानियों में मिलता है। ग्रामीण अंचल के निवासियों की निराशा, जिजीविषा का संघर्ष, सांप्रदायिकता और सामाजिक न्याय, प्रतिदिन की घटनाओं को उन्होंने अभिव्यक्त किया है अपनी रचनाओं में। वे वर्तमान समय के ग्रामीण जीवन के कथाकार हैं। शिवमूर्ति की कहानियों में स्त्री को संघर्षरत प्रस्तुत किया गया है। स्त्री सशक्तिकरण जो गूँज प्रेमचंद के साहित्य में थी, वही और भी सशक्त स्वर में शिवमूर्ति के कथा साहित्य में मिलती है। उनके स्त्री चरित्र कर्म पर विश्वास करती हैं, भाग्य पर नहीं।

इसी यथार्थ की परंपरा को आगे बढ़ते हैं आज के समकालीन कथाकार सत्यनारायण पटेल। सत्यनारायण पटेल का जन्म 6 जनवरी 1972 लोहार, पिपलिया देवास मध्य प्रदेश में हुआ। वह पुलिस विभाग में कार्यरत हैं। उन्होंने गाँव में रहते हुए, सरकारी नौकरी करते हुए जिस प्रकार का अनुभव किया, उसे अपने कहानियों में पिरोया। उनके कथा साहित्य में समकालीन पूँजीवाद के स्वरों की गूँज, पूँजीवादी सोच पर कटाक्ष 'लाल छीठ वाली लूँगड़ी का सपना' मे देखने को मिलता है। उनकी कहानी में 'नकारो' मे औरत ही औरत की दुश्मन बनी है। सास-बहू के रिश्ते की कटुता को कहानी का आधार बनाया गया है। उनकी कहानी 'पनही' इस दशक की क्लासिक कहानी मानी जाती है। उनकी कहानी बाजारवाद, सामंतवाद, आधुनिकता के तेज तूफान में मूल्य और संवेदनाएं किस प्रकार मृतप्रय सी हो रही हैं, इन संवेदनाओ को, वे अपनी कहानियों के माध्यम से पाठक तक पहुंचाते हैं। उनकी कहानियों के नारी पात्र आशावादी, दृढ़ संकल्प वाली हैं। 'घट्टी वाली माई' इसका उदाहरण है।

इस प्रकार प्रेमचंद के कथा साहित्य में उत्तर भारत, रेणु के साहित्य में बिहार अंचल, जगदीश चंद्र में पंजाब क्षेत्र, शिवमूर्ति में पुनः उत्तर भारत, सत्यनरायण पटेल के कथा साहित्य में मध्य प्रदेश भाग के बोली बनी भाषा मिलती है। अंततः हम कह सकते हैं परंपरा चलती आ रही है, चलती जा रही है, चलती जाएगी ।

संदर्भ सूची:

1. 'देहाती दुनिया'(2020), शिवपूजन सहाय, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
2. 'गोदान'(2019), प्रेमचंद, प्रकाश बुक इन्डिया, नई दिल्ली।
3. 'मैला आंचल'(2019), फणीश्वरनाथ रेणु, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
4. 'हिन्दी उपन्यास का इतिहास'(2020), गोपाल राय, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
5. 'उपन्यास और देश'(2022), वीरेंद्र यादव, सेतु प्रकाशन, नोएडा।

6. 'कहानी विचारधारा और यथार्थ'(2020), वैभव सिंह, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।
7. 'धरती धना अपना'(2019), जगदीश चंद्र, आधार प्रकाशन, पंचकुला, हरियाणा।
8. 'हिन्दी कहानी वक्त की शिनाख्त की और सृजन का राग'(2015), रोहिणी अग्रवाल, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।
9. 'काफिर बिजूका उर्फ इब्लीस'(2014), सत्यनारायण पटेल, आधार प्रकाशन, पंचकुला, हरियाणा।
10. 'भेम का भेरू मांगता कुल्हाड़ी ईमान, सत्यनारायण पटेल, अंतिका प्रकाशन, गाजियाबाद।

****